शंकराचार्य की गिरफतारी और हिन्दू धर्म

हिन्दू धर्म अपने अनुयायियों से चरित्र की अपेक्षा करता है। इसाई धर्म त्याग की और इस्लाम संगठन की पहली शिक्षा है रसूल पर ईमान लाना और सम्पूर्ण विश्व को रसूल पर ईमान लाने के लिये संगठित करना। इसाई धर्म भी इशु मसीह पर ईमान को प्राथमिता देता है किन्तु संगठित नहीं करता बल्कि तैयार करता है। हिन्दू धर्म पूरी तरह आचरण प्रधान है। तीनो धर्मो में ही आचरण को भरपूर मान्यता है किन्तु सिर्फ प्राथमिकताओं का अन्तर है। हिन्दू धर्म संगठन से अधिक आचरण को प्रमुख मानता है इसाई धर्म दोनों में समन्वय करता है और इस्लाम संगठन को अधिक प्राथमिकता देता है।

पिछले कई वर्षों से हिन्दू धर्म में भी कुछ लोगों ने महसूस किया कि आचरण आदर्श है किन्तु सफल नहीं। इस्लाम पूरी दुनियाँ में लगातर बढ़ रहा है और भारत में भी बढ़ता ही जा रहा है। जिसमें उसकी संगठन शक्ति का कमाल है। अतः यदि हिन्दू धर्म भी संगठन शक्ति की दिशा में नही गया तो इस्लाम और ईसाइयत उसे धीरे धीरे निगल जायेंगे। ऐसा कहने वालों की चिन्ता तर्कपूर्ण थी भले ही वह आम हिन्दू संस्कृति के विपरीत ही क्यों न हो। ये लोग लगातार हिन्दूओं को संगठन की आवश्यकता समझाते रहे और स्वयं को मजबूर करते रहे। धीरे धीरे स्थिति यह आई की भारत की सम्पूर्ण राजनीति पर धार्मिक टकराव ही हावी हो गया। मुसलमानों के मुख्य समर्थक साम्यवादी सामने आये और कांग्रेस उसके साथ खड़ी हो गई हिन्दू संगठनों की समर्थक भा.ज.पा. शिवसेना आदि हुई। अन्य सभी दल इधर उधर लुढ़कते रहे।

जब भी किसी मुसलमान धर्मगुरू के विरूद्ध कोई मामला आया तो साम्यवादी पूरी तरह चट्टान की तरह खड़े हो गये तथा कांग्रेस सहित अन्य दलों ने उनका पूरा पूरा समर्थन किया। यहां तक कि यदि कोई आतंकवादी मुसलमान भी पकड़ा या मारा गया तो साम्यवादियों को उससे सर्वाधिक कष्ट हुआ। दूसरी ओर संघ परिवार ने भी लगभग वही नीतियाँ अपनाई। किन्तु साम्यवादी इस मामले में संघ वालों की अपेक्षा अधिक चालाक निकले। साम्यवादियों ने एक ओर तो अपने को धर्म निरपेक्ष घोषित करके एक ऐसा मोर्चा बना लिया जिसमें हिन्दुओं के अतिरिक्त अन्य सभी धर्मावलम्बी शामिल हो गये दूसरी और अनेक हिन्दू भी धर्म निरपेक्षता के नाम पर इनसे जुड़ गये। संघ परिवार अलग थलग पड़ता गया। प्रचार की आँधी में संघ परिवार अकेला एक ओर और अन्य सब दूसरी ओर खड़े हो गये। साम्यवादी संघ परिवार को अपना साझा शत्रु प्रमाणित करने में सफल हुए किन्तु संघ परिवार पचपन वर्षों में भी अपना साझा शत्रु घोषित नहीं कर सका। ये लोग मुसलमान इसाईयों तथा साम्यवादियों से एक साथ अकेले टकराने की भूल करते रहे। ये भूल गये कि हिन्दुओं को इकट्ठा करना अन्य धर्मावलम्बियों को इकट्ठा करने की अपेक्षा बहुत कठिन है क्योंकि अन्य धर्मावलम्बी चरित्र की अपेक्षा संगठन को महत्व देता है जबकि हिन्दू संस्कार ही चरित्र प्रधान है।

इसी बीच शंकराचार्य जी का प्रकरण आ खड़ा हुआ। शंकराचार्य जी हिन्दुओं के सर्वोच्च आस्था के केन्द्र रहे हैं। इनके विरूद्ध कभी कोई आरोप भी नहीं लगा इनका स्वाभाव भी बहुत मिलनसार रहा। एकाएक शंकररमण हत्या के मामले में इनकी गिरफतारी ने हिन्दू समाज को सकते में डाल दिया। आम हिन्दू गिरफतारी के कारणों कि जानकारी में ही व्यस्त था अधिकांश हिन्दू तो गिरफतारी की घटना सुन भी नही सके थे कि राजनीति का खेल शुरू हो गया। संघ परिवार और उसकी राजनैतिक शाखा भा.ज.पा. ने तत्काल ही हिन्दू विलाप शुरू कर दिया। शंकराचार्य की गिरफतारी को हिन्दू धर्म पर आये खतरे से जोड़ दिया गया। दूसरी ओर साम्यवादियों ने धर्म निरपेक्ष की चादर ओढ़कर शंकराचार्य के विरूद्ध अभियान सा छेड़ दिया। सम्पूर्ण प्रकरण यथार्थ से हटकर राजनीति में समाहित हो गया। कांग्रेस पार्टी और मुसलमान किंकर्तव्य विमूढ़ थे कि क्या कहें और क्या न कहें। करूणानिधि जी ने तो और कमाल का काम किया। पहले तो गिरफतारी कि मांग की और जब गिरफतारी हुई तो विरोध शुरू हो गये। मुझे तो यह भी आश्चर्य हुआ जब हिन्दू धर्म के स्वयं भू महासचिव प्रवीण जी तोगड़िया को शंकराचार्य की गिरफतारी में विधर्मी और विदेशी महिला सोनिया गांधी का हाथ दिखाई दियां। मुझे यह जानकार दुख हुआ कि इतने बड़े बड़े धर्म रक्षकों को इतना तक ज्ञान नही कि झूठ कब और कैसे बोला जाता है लेकिन इन्होंने अनेक प्रकार की ऐसी ही बेसिर पैर की हवा उड़ाकर शंकराचार्य गिरफतारी प्रकरण की पूरी हवा ही निकाल दी और पूरा प्रकरण टाय टाय फिस सा हो गया। कांग्रेस पार्टी का बयान बहुत संतुलित था और सबसे अच्छा बयान मुस्लिम नेताओं का था जिन्होंने इस गिरफतारी की निन्दा करके वातावरण को साम्प्रदायिक स्वरूप ग्रहण करने से बचा लिया।

भारत में कानून का शासन बताया जाता है। यह भी कहा जाता है कि कानून सबके लिये बराबर है यद्यपि पूरे भारत में मुझे तो आज तक कभी और कहीं भी ऐसा देखने को नहीं मिला सिवाय इस गिरफतारी के। मुसलमान समय समय पर अपनी संगठन शक्ति का आभास कराते रहते हैं। किसी मुस्लिम धर्म गुरू की तो बात जाने दीजिये एक पाकिस्तानी आंतकवादी मुसलमान को गुजरात पुलिस आंध्र में जाकर गिरफतारी करती है तब भी हमारे भारत के धर्म निरपेक्ष और मानवाधिकारी दहाड़ मार–मार कर चिल्लाते हैं कि मोदी ने बहुत अन्याय किया आज भारतीय राजनीति में एक से बढ़कर एक नामी अपराधी खुलेआम सक्रिय है किन्तु कहीं बराबरी का कानून नहीं दिखा। गो हत्या मामले में पचपन वर्षों में कानून नहीं बना जबकि शाह बानो प्रकरण में बन गया। यह भारत की ही कानूनों की समानता है कि एक व्यक्ति दूसरा विवाह करने लिये मुसलमान बनते ही पात्र बन जाता है। किसी भी मामले न साम्यवादियों

ने सामान कानून की बात की धर्म निरपेक्षों ने। मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि कानून सबके लिये समान कानून के सिद्धान्त का विरोध करते हैं। यदि भारत के सामान्य लोग शंकराचार्य प्रकरण में कानून में बराबरी की बात कहते तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता किन्तु जो हर मामले में अल्प संख्यकों के विशेषाधिकारों की वकालत करते हों वे दो मुँही बात करें तो आश्चर्य भी होता है और दुख भी।

इस प्रकरण में सर्वाधिक धर्म संकट हिन्दुओं के समक्ष उपस्थित था। बचपन से ही उन्होंने सुन रखा कि शंकराचार्य जी उनकी आस्था के सर्वोच्च केन्द्र बिन्दू है। उन्होंने साथ साथ यह भी सुन रखा था कि हिन्दू मठों में सभी तरह के अपराध घटित होते रहते हैं इन मठों में रहने वाले शंकराचार्य उच्च कोटी के विद्वान और चरित्रवान व्यक्ति होते हैं। साथ ही इन मठों में कुल सम्पत्ति भी होती है और सम्पत्ति के विवाद भी। और दोनों ही बातों के बीच समान और निर्लिप्त भाव से रहने वाला समुदाय हिन्दू है। हिन्दू धर्मावलम्बी बचपन से ही चरित्र और आचरण की बात सुनता आया है। यह उसका संस्कार बन चुका है। उसने कभी हिन्दू धर्म को किसी संगठन के रूप में नहीं देखा। यही कारण था कि भारत का आम हिन्दू शंकराचार्य की गिरफतारी के प्रकरण में मूक दर्शक और निर्लिप्त रहा। हिन्दुओं कि भावनाओं पर न तो हिन्दू संगठनों और कुछ धर्माचार्यो की लामबंद चिल्लाहट का असर हुआ न ही निरंतर झूठ बोलकर हल्ला करने वाले तथा कथित धर्म निरपेक्षों का जिन्होंने गला फाड़ फाड़कर शंकराचार्य को निरंतर दोषी प्रमाणित किया। संघ परिवार के किसी आंदोलन का पूरे भारत में कोई प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि भारत का आम हिन्दू चरित्र को संगठन से अधिक महत्व देता है। हिन्दू यह सहन नहीं कर सकता कि उसको किसी सर्वोच्च धर्माचार्य के चरित्र पर ऐसा संदेह पैदा हो भले ही वह झूठा ही क्यों न हो हिन्दुओं ने इस प्रकरण में जो सूझ बूझ और धैर्य का परिचय दिया वह बेमिसाल है। मैं स्वयं हिन्दुओं से ऐसी ही उम्मीद करता था।

धर्मावलम्बी बचपन से ही चरित्र और आचरण की बात सुनता आया है। यह उसका संस्कार बन चुका है। उसने कभी हिन्दू धर्म को किसी संगठन के रूप में नहीं देखा यही कारण था कि भारत का आम हिन्दू शंकराचार्य की गिरफतारी के प्रकरण में मूक दर्शक और निर्लिप्त रहा। हिन्दुओं की भावनाओं पर न तो हिन्दू संगठनों और कुछ धर्माचार्यों की लामबंद चिल्लाहट का असर हुआ न ही निरंतर झूठ बोलकर हल्ला करने वाले तथा कथित धर्म निरपेक्षों का जिन्होंने गला फाड़ फाड़ कर शंकाराचार्य को निरंतर दोषी प्रमाणित किया। संघ परिवार के किसी आंदोलन का पूरे भारत में कोई प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि भारत का आम हिन्दू चरित्र को संगठन से अधिक महत्व देता है। हिन्दू यह सहन नहीं कर सकता कि उसको किसी सर्वोच्च धर्माचार्य के चरित्र पर ऐसा संदेह पैदा हो भले ही वह झूठा ही क्यों न हो हिन्दुओं ने इस प्रकारण में जो सूझ बूझ और धैर्य का परिचय दिया वह बेमिसाल है। मैं स्वयं हिन्दुओं से ऐसी ही उम्मीद करता था।

हिन्दुओं ने तो हिन्दुत्व की लाज बचा ली संघ परिवार भी आपनी आदत के अनुसार हल्ला मचाया और फेल हुआ। किन्तु सर्वाधिक संकट तो अब साम्यवादियों तथा तथाकथित धर्म निरपेक्षों के समक्ष खड़ा होने वाला है। एक बार तो उन्होंने कानून की समानता की दुहाई देकर अपनी धर्मनिरपेक्षता प्रमाणित कर दी लेकिन यह तो सिर्फ एक दिन की बात नहीं है कुछ ही महिने में कोई न कोई मुसलमानों का मामला उठेगा। तब ये किस मुँह से उसका पक्ष लेंगे। क्यों ये पुनः पलटी मार देंगे क्या ये फिर अल्पसंख्यकों के लिये विशेष कानून की वकालत करने लगेंगे। अब तक वे जो भी करते थे वह सब कोई हलचल पैदा नहीं करता था।

क्योंकि उनके विरूद्ध आवाज उठाने वाला संघ परिवार स्वयं ही समाज में विश्वासपात्र नहीं था किन्तु अब तो एक वास्तविक धर्मनिरपेक्ष जमात खड़ी हो गई है। जिसने इन दोनों धर्म के ठेकेदारों से धर्म का पिण्ड छुड़ाने का निश्चय कर लिया है। मैं दोनों ही पक्षों से विन्रम निवेदन करता हूँ कि वे धर्म को धर्म ही रहने दे उसे सियासत का अखाड़ा न बनावे अन्यथा वे धर्म की तो क्षति करेंगे ही अपनी भी क्षति करेंगे।

प्रश्नोत्तर–

(1) श्री नरेश हमिल पुरकर, चिटगुप्पा, बीदर कर्नाटक

समीक्षा–ज्ञान तत्व निरंतर पढ़ता हूँ। मैं भी प्रयत्नों में साथ देना चाहता हूँ। मंच के संबंध में विस्तृत जानकारी भेंजे तो दक्षिण भारत में इस कार्य को गति देने में बढ़ूँ।

उत्तर–अब तक हम ज्ञान यज्ञ मण्डल और लोक स्वराज्य मंच के संगठनात्मक स्वरूप का कोई निश्चित ढांचा नहीं बना सके हैं। कुछ प्रारंभिक ढांचा अम्बिकापुर सम्मेलन में बना है। ज्ञान तत्व अंक तिरासी में लिखा भी गया है आपके पिछले पत्र और वर्तमान पत्र के आधार पर हमने आपको अपनी केन्द्रीय कार्यकारिणी में तो शामिल कर लिया है। आपको चाहिये कि आप अपने आस–पास की पांच लोक सभा क्षेत्रों में संगठन खड़ा करें या आप कहीं लोक स्वराज्य सम्मेलन का आयोजन करें जहां मेरा भाषण होने के बाद संगठन खड़ा हो सके यदि आप दक्षिण भारत से केन्द्रीय उपाध्यक्ष भी स्वीकार कर सकते हैं। आपकी क्षमता और सक्रियता के आधार पर हम आपके दायित्व का आंकलन करेंगे। आप तदनुसार हमें सूचित करियेगा।

(2) श्री रामगोपाल जी, A2B/94AM9G Flats पश्चिम विहार, नई दिल्ली, 110063

विचार—ज्ञान तत्व लगातार पढ़ने के बाद लगता है कि आप अहिंसक मार्ग से वर्तमान व्यवस्था को बदलने के प्रयास में लगे हैं। राजनीति शास्त्र का सिद्धान्त है कि बिना खून बहाये व्यवस्था परिवर्तन संभव नहीं है। गांधी जी भी इस सिद्धान्त को अस्वीकार करके असफल हुए और आप भी होंगे। यह देश निरंतर अव्यवस्था की ओर बढ़ रहा है। सम्पूर्ण विश्व में इसाइयत और इस्लाम के बीच प्रतिस्पर्धा का संघर्ष चल रहा है और हिन्दुत्व इस संघर्ष को चोट से प्रभावित हो रहा है। यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि मुस्लिम नेतृत्व का उद्देश्य भारत को इस्लामिक देश बनाना है। कांग्रेस आंख मुंदकर इनके साथ है और उस कांग्रेस को पुनः जीवन दान देने वाले हैं। कट्टरपंथी मुसलमान कम्युनिष्ट झूठे धर्म निरपेक्ष और दो मुँह भाजपाई अब इनसे कोई आशा करना व्यर्थ है अब तो हमें एक बार भारत कि सम्पूर्ण व्यवस्था सेना को सौंप देना चाहिए। जात पात आरक्षण आदि भेद भावों से दूर तथा पूरी तरह राष्ट्र भाव से ओत प्रोत सेनाध्यक्ष नेतृत्व संभाले जिससे दुर्जन भयभीत और सज्जन मजबूत हो सेनाध्यक्ष देश के कुछ कर्मठ और योग्य लोगों का मंत्रीमंडल तथा एक सलाहकार परिषद बनाकर दस पंद्रह वर्षों तक यदि राजनेताओं का व्यवस्था से दूर कर दें और नई व्यवस्था बना ले तो बहुत सुधार संभव है।

उत्तर – आपका सुझाव कुछ वैसा ही है जैसे कोई गंभीर और कष्टदायक बीमारी से ग्रस्त मरीज भगवान से प्रार्थना करें कि अब तो तुम मुझे उठा लो क्योंकि यह कष्ट असहनीय हो रहा है। आपने समस्या की पहचान में भी भूल की है और समाधान में भी। आपने हिन्दुत्व पर आये इस्लामिक संकट को सबसे बड़ा संकट बताया है जबकि मेरे विचार में हिन्दुत्व की अपेक्षा शराफत अधिक संकट में है। धूर्त, तिकड़मी, अपराधी और आतंकवादी ज्यादा जोर से मजबूर होते जा रहे हैं। इस्लाम को सम्पूर्ण भारत पर कब्जा करने में भी अभी पंद्रह बीस वर्ष लग सकते हैं किन्तु अपराधियों द्वारा समाज पर पूरा कब्जा करने में पांच दस वर्ष भी नहीं लगेंगे। यदि अपराधियों पर कोई नियंत्रण हो जावे तो इस्लाम के साम्प्रदायिक मंसूबे भी ध्वस्त किये जा सकते हैं किन्तु भारत को इस्लाम मुक्त कर देने से भी आंतकवाद डकैती मिलावट और बलात्कार पर नियंत्रण नहीं हो सकेगा। अब तक भारत में हिन्दुत्व पर संकट के प्रचार ने समस्या की पहचान में रोड़े ही अटकाए है। अतः आप अपने निष्कर्ष पर फिर से विचार करें कि हम ग्यारह समस्याओं का एक साथ समाधान खोज अथवा सिर्फ साम्प्रदायिकता का। आप जानते ही हैं कि ग्यारह समस्याओं में साम्प्रदायिकता भी शामिल है।

आपने सैनिक शासन की वकालत करके तो और भी भूल कर दी है। क्या आपने कभी यह भी सोचा है कि यदि कोई सर्वोदय सैनिक शासन ही गड़बड़ी करने लगे तब उसे हटाने का क्या मार्ग होगा? आपने सैनिक शासक को देवता कैसे मान लिया? मैं जानता हूँ कि रक्षा विभाग के उच्च पदों पर काम करने के कारण आपका बहुत अनुभव है किन्तु जब ऐसा व्यक्ति नागरिक प्रशासन के सर्वोदय और सर्व शक्तिमान पद पर जायेगा तब भी वैसा ही रहेगा। इसकी क्या गारंटी है हम इतना बड़ा खतरा नहीं उठा सकते हम व्यवस्था परिवर्तन करके सम्पूर्ण सत्ता अपने हाथों में लेने की अपेक्षा किसी एक व्यक्ति को दें यह बिल्कुल गलत कदम होगा, चाहे वह व्यक्ति कितना भी अच्छा क्यों न हो।

मेरा आपसे निवेदन है कि लोकतंत्र की बुराइयों के बारे परिणामों से घबराकर सैनिक शासन जैसे आत्मघाती कदम की बिल्कुल वकालत न करें साथ ही आप आग लगी होने पर खेत सींचने जैसी अदूरदर्शी प्राथमिकताएँ भी बदलने की कृपा करें। शराफत पर आंतकवाद की ज्वाला लपटे फैला रही है और आप इस्लाम का कम महत्वपूर्ण राग अलाप कर प्राथमिकताएं बदल रहे हैं। आशा है कि या तो आप सहमत होंगे या अपने कथन के पक्ष में कुछ और तर्क देने की कृपा करेंगे।

आपने किसी विद्वान का उदाहरण दिया कि क्रान्ति अहिंसक नहीं हो सकती। उसे खून अवश्य चाहिए। मेरे विचार में या तो ऐसा कहने वाला विचारक नहीं था या उसने परिस्थिति वश ऐसा कहा होगा। क्रांति हिंसक भी हो सकती है और अहिंसक भी। हिंसक भी क्रांति मजबूरी हो सकती है आदर्श नही हमारे समक्ष ऐसी कोई मजबूरी नहीं। जिन लोगों के तर्कों में दम नहीं होता जो समाज को समझाकर व्यवस्था परिवर्तन के लिये सहमत नही कर सकते वे ही खूनी क्रांति की चर्चा करते हैं। अब तक दुनियाँ इस्लामिक देशों में ही हुई है। भारतीय व्यवस्था को उस परंपरा का अनुसरण नहीं करना चाहिये। खूनी क्रान्ति के लिये जैसे षड़यंत्र तथा मानवता विहिन आचरण की आवश्यकता होती है। वैसा संस्कार आम भारतीयों का है ही नहीं अतः न तो खूनी क्रांति की आवश्यकता है न ही संभव स्वामी दयान्द के शिष्यों ने मिलकर जिस अहिंसक क्रान्ति का शंखनाद किया है वह व्यवस्था परिवर्तन के लिये पर्याप्त सक्षम आधार है। आप जैसे लोग इस परिवर्तन से जुड़े और तब आप देखेंगे कि किस तरह पूरे देश में वैचारिक आधार पर क्रान्ति सफल होती है। अब निराश होने और सैनिक शासन की इच्छा जाहिर करने का समय समाप्त हो चुका है।

(3) श्री अरूण योगीराज, एच 92/64 तुलसी नगर, भोपाल मध्यप्रदेश,

प्रश्न – मैं ज्ञानतत्व पढ़ता हूँ। शुल्क भी शीघ्र ही भेज दूगाँ। मैं आपके इस कथन से सहमत हूँ कि वर्तमान व्यवस्था श्रम शोषण है। आम मजबूर लोगों को जब तक रोजगार प्राप्त नहीं होता तब तक गरीबी कम नहीं हो सकती।

मेरा मत है कि भारत में अस्सी प्रतिशत कृषि आधारित रोजगार होने के कारण कृषि को लाभदायक बनाना आवश्यक है आज खेती अलाभकर होती जा रही है। किसान को लागत मूल्य भी नही मिल पाता है। खेती की लागत रासायनिक खाद कीटनाशक सिंचाई से बढ़ती है। उनके स्थान पर जैविक खाद जैविक कीटनाशक सौर उर्जा पशुशक्ति, मानवशक्ति चलित यंत्रों का प्रयोग बढ़ाया जावे। साथ ही किसान को फसल का उचित मूल्य भी मिलना चाहिए।

(4) श्री महेश भाई विजयीपुर, गोपालगंज बिहार,

प्रश्न– आज हम अर्थनीति के जिस मकड़जाल में उलझ गये हैं उससे निकलने की कोई राह नहीं दिखती। जिन कारकों ने आर्थिक असंतुलन पैदा किया है उनकी पहचान करना तथा निराकरण खोजना वर्तमान आर्थिक योजनाओं के बस की बात नहीं दिखती। कुल राष्ट्रीय आय का मकड़जाल वास्तविक श्रम मूल्य को ही निगल रहा है। वास्तविक श्रम मूल्य को ही निगल रहा है वास्तविक श्रम मूल्य और कृत्रिम श्रम मूल्य का अन्तर कैसे दूर हो। वास्तविक श्रम मूल्य का निर्धारण कैसे किया जाये आदि ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न है। जिनका उत्तर खोजे बिना अर्थ व्यवस्था की गाड़ी एक इंच भी आगे नहीं बढ़ सकती है जिस स्तर कृत्रिम उर्जा की शक्ति की इकाई को अश्व शक्ति के रूप में मापित किया गया है। उसी प्रकार मानवीय श्रम का उचित और सम्मान जनक मूल्य दिलवाना संभव हो सका है। यह तभी संभव है जब भारत के आर्थिक विशेषज्ञों के साथ–साथ श्रमिकों को भी यह वास्तविकता समझ में आ जाये कि कृत्रिम उर्जा का हर उत्पादक इकाई पर आधिपत्य जमाना श्रम के लिए घातक है। जब तक कृत्रिम उर्जा का आकर्षण और वर्चस्व कायम रहेगा तब तक वास्तविक श्रम मूल्य उपेक्षित रहेगा ही। श्रम मूल्य तभी बढ़ेगा जब मांग बढ़ेगी और मांग तभी बढ़ेगी जब कृत्रिम उर्जा महंगी होगी। किन्तु यह तकनीक आम नागरिकों का समझाना कठिन कार्य है क्योंकि साइकिल पर टैक्स है यह कोई नहीं जानता और न उसे जानने दिया जाता है किन्तु कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि का बहुत प्रचार किया जाता है। यहाँ तक तो मैं आपके कथन से अक्षरशः सहमत हूँ।

किन्तु आप ने श्रम प्रधान और बुद्धि प्रधान का पृथक पृथक आंकलन करके श्रम प्रधानों के अपेक्षाकृत अधिक उपयोग की वस्तु में अनाज, कपड़ा, दवा आदि को शामिल किया और बुद्धिजीवियों कि अधिक उपयोग कि वस्तुओं में कृत्रिम उर्जा करें। यह आंकलन पूरी तरह गलत या भ्रामक है वास्तविक यह है कि अनाज, कपड़ा, दवा आदि वस्तुएँ श्रम जीवी या बुद्धिजीवी पृथक पृथक मात्रा में उपयोग नहीं करते हैं। इसी तरह पशुचारा या लघु वनोपज के उपयोग में भी श्रमजीवी बुद्धिजीवी का अन्तर नहीं है। टेलीफोन भी आम उपयोग की वस्तु बन गई है। परदेश कमाने वाला अपने बच्चों से बात करने में टेलीफोन की ही सहायता लेता है। मेरे विचार में वस्तुओं का वर्गीकरण दो ही होना चाहिये। (1) जीवनोपयोगी आवश्यक वस्तुएँ (2) विलासिता की वस्तुएँ। विलासिता की वस्तुओं पर कर अधिक लगे और आवश्यक वस्तुएँ कर मुक्त हों इतनी सर्तकता ही पर्याप्त है।

उत्तर– आपने कृत्रिम उर्जा और श्रम की तुलना बहुत ही सूक्ष्म विवेचना से की है। यह हमारे लिये संतोष की बात है किन्तु आपके दूसरे बिन्दु पर गंभीर विचार करने की आवश्यकता है। आय की दृष्टि से व्यक्ति तीन प्रकार के है। 1. श्रमप्रधान 2. बुद्धिप्रधान 3. धनप्रधान जिस व्यक्ति की आय के मुख्य श्रोत सिर्फ शारीरिक शक्ति पर निर्भर है उसे श्रम प्रधान कहते हैं। ऐसे व्यक्ति की सम्पूर्ण आय में श्रम की भूमिका निर्णायक और बुद्धि की आंशिक ही होती है। ऐसे व्यक्ति के पास आय का मुख्य श्रोत एक मात्र श्रम ही होता है और श्रम की अधिकतम आय में बौद्धिक श्रम का विशेष और शारीरिक श्रम का सहायक प्रयोग होता है। ऐसे व्यक्ति के पास बुद्धि और श्रम दोनों ही आय के लिये उपलब्ध होते हैं। ऐसे व्यक्ति की दैनिक आय दो सौ रूपये से प्रारंभ होकर पांच हजार रूपया प्रतिदिन तक हो सकती है। अनेक डॉक्टर या वकील तो इससे अधिक भी प्रतिदिन कमाते हैं। तीसरे प्रकार के व्यक्ति को धन प्रधान कहते हैं। ऐसे व्यक्ति के पास श्रम बुद्धि और धन तीनों ही आय में सहायक होते हैं ऐसे व्यक्ति की आय की कोई सीमा नहीं होती क्योंकि उसके पास उपलब्ध धन उसकी आय में वृद्धि करता है। ऐसे व्यक्ति बहुत तीव्र गति से धन बढ़ाते जाते हैं। मेरा अपना अनुभव है कि श्रम प्रधान व्यक्ति की आय और व्यय बुद्धि प्रधान की अपेक्षा बहुत कम और सीमित होता है।

अब हम उपभोग पर विचार करें तो यह पूरी तरह प्रमाणित है कि श्रम प्रधान व्यक्ति का भोजन बुद्धि प्रधान की अपेक्षा करीब पैंतीस प्रतिशत अधिक होता है। सरकारी नियमों में भी श्रम प्रधान को अनाज पांच सौ पच्चीस ग्राम प्रतिदिन और बुद्धि प्रधान के लिये तीन सौ नब्बे ग्राम प्रतिदिन ही निर्धारित है। बुद्धि प्रधान व्यक्ति अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार अन्य कई वस्तुएँ खाकर इस अनाज की मात्रा को और कम कर लेता है जबकि श्रम प्रधान कम नहीं कर पाता। अन्न की खपत पर और सूक्ष्म विश्लेषण किया गया तो पाया गया कि भारत में श्रमजीवियों की संख्या सत्तर प्रतिशत बुद्धि जीवियों की बीस प्रतिशत और पूंजीपतियों की दस प्रतिशत है। वस्तुओं की खपत का अनुमान कुछ इस तरह है।

उपरोक्त अनुमानों से स्वयं सिद्ध है कि भारत का श्रमजीवी अस्सी प्रतिशत अनाज उपभोग करता है और बुद्धिजीवी पंद्रह प्रतिशत। किन्तु टेलीफोन ,रसोई गैस, आवागमन और कृत्रिम उर्जा के मामले में इससे ठीक विपरीत है। अतः मेरा आपसे निवेदन है कि अनिवार्य आवश्यकता की वस्तुओं और सुविधा की वस्तुओं में अन्तर करना शुरू करें। हम घोषणा करें कि अनिवार्य आवश्यक वस्तुओं पर किसी भी स्थिति में कोई कर नहीं होगा। सारा कर विलासिता की वस्तु पर होगा और यदि आवश्यक ही हुआ तो सुविधा की वस्तु पर लगाया जा सकता है। आवश्यक वस्तु पर नहीं।

आपने कृत्रिम उर्जा पर हमारे दृष्टिकोण का भरपूर समर्थन किया है। दूसरे दृष्टिकोण को भी समझेंगे ऐसी आशा है।

(5) श्री कृष्णदेव सिंह जी, कैथोली मउनाथ भंजन उत्तरप्रदेश 275101

प्रश्न—अंक बयासी पढ़ा। कुछ पत्र अनावश्यक छापे गये हैं क्योंकि उनमें सिर्फ सूचना थी विचार नहीं। इस संबंध में सतर्क रहें कि पाठकों का समय बचे।

अम्बिकापुर सम्मेलन की रिपोर्ट पढ़ी। आपने ग्यारह समस्याएँ और दस नाटक शब्द लिख दिये। अच्छा होता यदि आप ग्यारह समस्याएँ और दस नाटकों का विवरण लिखते।

मैं मधुकर जी के विचार से सहमत हूँ कि कैडर बनाने की आवश्यकता है। चरित्रवान और समर्पित कार्यकर्ता ही आन्दोलन को बढ़ा सकते हैं। किन्तु आपने तो पृष्ठ छब्बीस के बिन्दु सात में यह लिख दिया कि अभियान से जुड़ने वाले व्यक्ति के व्यक्तिगत या सामाजिक आचरण के लिये कोई आचार संहिता नहीं बनाई जायेगी। आपका कथन बिल्कुल ही गलत लगा। कोई हमारे संगठन का सदस्य हो और हम उसके व्यक्तिगत या सामाजिक आचरण की कोई छानबीन की व्यवस्था न करें यह उचित नहीं। दोहरी निष्ठा के लोग हमें नुकसान पहुंचा सकते हैं आपने पृष्ठ सताइस में यहां तक लिख दिया है कि वे चरित्रवान व्यक्ति इस अभियान में बाधक हैं। जो अपना चरित्र दूसरों पर थोपना चाहते हैं। यह बात तो मुझे और भी गलत जचीं।

केन्द्रीय कार्यालय यदि अम्बिकापुर की बगल किसी अन्य रेल्वे केन्द्र पर होता तो और सुविधा होती। इससे आन्दोलन और बढ़ सकता था। आशा है कि जिज्ञासा शान्त करने का प्रयत्न करेंगे।

उत्तर—नई व्यवस्था के अंतर्गत ज्ञान तत्व का कुछ हिस्सा लोक स्वराज्य मंच संबंधी सूचनाओं के लिये रहता है। जो अभिषेक जी लिखते हैं उसकी उपयोगिता है। फिर भी हम और सतर्क रहेंगे।

ग्यारह समस्याएँ और दस नाटक पिछले कई अंकों में लिखे जाने से आप सबका याद हो गये हैं ऐसा मानकर विस्तृत विवरण नहीं दिया गया फिर भी एक बार आपके आग्रह पर पुन लिख रहा हूँ। जिससे भविष्य में सुविधा रहे।

ग्यारह समस्याएँ –

1.चोरी, डकैती, लूट 2.बलात्कार, 3.मिलावट, कमतौल, 4.जालसाजी, धोखाधड़ी, 5.हिंसा, आतंक, बल प्रयोग 6.भ्रष्टाचार 7. चरित्र पतन, नैतिक पतन, 8. साम्प्रदायिकता 9.जातीय कटुता 10.आर्थिक असमानता वृद्धि 11.श्रम शोषण,

राजनेताओं के नाटक के दस सूत्र –

(1) समाज को कभी एक जूट न होने देना। समाज में आठ आधारों पर वर्ग। निर्माण तथा वर्ग विद्वेष फैलाकर वर्ग संघर्ष की स्थिति निर्मित करना। आठ आधार है धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति और उत्पादक उपभोक्ता।

(2) समाज शब्द को कमजोर करके राष्ट्र शब्द और राष्ट्र भाव को मजबूत करना।

(3) समाज में वैचारिक बहस को पीछे करके भावनात्मक मुद्दों पर बहस जारी रखना।

(4) अधिक से अधिक कानून बनाना जिससे आम नागरिक अपराध भाव से ग्रसित रहें।

(5) आम नागरिकों को अक्षम अयोग्य और अनपढ़ कहकर उनमें हीन भाव भरना।

(6) क. आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का प्रशासनिक समाधान करना।

ख. सामाजिक और प्रशासनिक समस्याओं का आर्थिक समाधान करना।

ग. प्रशासनिक और आर्थिक समस्याओं का सामाजिक समाधान करना।

(7) समस्याओं का ऐसा समाधान करना कि उस समाधान से ही किसी नई समस्या का जन्म हो।

(8) बिल्लियों के बीच बन्दर की ऐसी भूमिका बनाना कि

क. बिल्लियों कि रोटी कभी बराबर न हों,

ख. बन्दर हमेशा रोटियों का बराबर करता हुआ दिखे। किन्तु करें नहीं।

ग. छोटी रोटी वाली बिल्ली के मन में असंतोष की ज्वाला जलती रहे।

(9) आर्थिक असमानता प्रजातांत्रिक तरीके से बढ़ती रहे इसके लिये

क. जो वस्तु गरीब लोग अधिक और अमीर लोग कम मात्रा में प्रयोग करें उन पर अप्रत्यक्ष कर लगाना और प्रत्यक्ष सब्सीडी देना।

ख. जो वस्तु अमीर लोग अधिक और गरीब लोग कम मात्रा में प्रयोग कर लगाना और अप्रत्यक्ष सब्सीडी देना।

(10) विपरीत प्राथमिकताएँ निर्धारित करना वास्तविक समस्याओं को अंतिम प्राथमिक और अस्तित्वहीन समस्याओं के समाधान को सर्वोच्च प्राथमिकता देना।

आपने हमारे अभियान से जुड़ने वाले साथियों के व्यक्तिगत और सामाजिक आचरण की आचार संहिता की आवश्यकता बताई है। मैंने इस विषय में बहुत सोचा है। विचार की अपेक्षा चरित्र का प्रभाव बहुत पड़ता है। यह सही है समाज सुधार के लिये चरित्र आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। हम नई व्यवस्था के निर्माण में जो अभियान शुरू करेंगे। उसमें इस बात का पूरा पूरा ध्यान रखेंगे। किन्तु अभी हम जो अभियान शुरू कर रहे हैं उसके लिये कोई शर्त लगाना उचित नही। शासन के अधिकार दायित्व और हस्तक्षेप न्यूनतम होना चाहिए यह बात चरित्रवानों को छोड़कर अन्य लोग ऐसा न कहें या उनके ऐसा कहने से कोई हानि होगी ऐसा मैं नहीं मानता। आप जो कह रहे हैं वह बात पूरी तरह सैद्धान्तिक है और वही बात कहीं जानी चाहिये मैंने जो कहा है। वह हर पाठक को सिद्धान्त विरूद्ध लगेगा। किन्तु कर्ण कटु होते हुए भी यह विचार पूरी तरह व्यावहारिक है। इस प्रश्न का आवश्यकतानुसार और चर्चा हो सकती है। आज समाज में करीब एक दो प्रतिशत चरित्रवान लोग दिखते हैं और एक दो प्रतिशत ही अपराधी तत्व है। शेष पंचान्नबे प्रतिशत लोग बीच के हैं। जो चरित्रवानों की तुलना में चरित्रहीन और अपराधियों की तुलना में चरित्रवान दिखाई देते हैं। आम तौर पर ये एक प्रतिशत चरित्रवान अपने चरित्र के घमण्ड में बीच वालों को हेय मानते हैं जबकि अपराधी तत्व उन्हें गले लगाते हैं। वर्तमान घातक स्थिति में इन पंचान्नबे प्रतिशत को अपराधियों से अलग करने की आवश्यकता है। हमने और शहर रामानुजगंज में यही नीति अपनाई हमने अपराधियों के लिये तीन नम्बर शब्द बनाया और उन्हें दो नम्बर से पृथक किया। हमें सफलता मिली। मेरे विचार से आपत्तिकाल और युद्धभूमि में आदर्श और चरित्र की सामान्य परिभाषा को लेकर चलने पर पुर्नविचार आवश्यक है। यही आपत्तिकाल में राम का चरित्र था और यही कृष्ण का और यही बात मैं भी आपसे कह रहा हूँ।

आपने केन्द्रीय कार्यालय अम्बिकापुर की अपेक्षा कहीं अन्यत्र रेलवे स्टेशन पर रखना सुविधा जनक माना। यह प्रश्न सम्मेलन में भी उठा था। हमारे पास आय के श्रोत अत्यन्त सीमित है। यदि कहीं और कार्यालय रखा गया तो कम से कम दस हजार तक अतिरिक्त खर्च आयेगा। कहाँ से व्यय बढ़ाया जाये। यह योजना बनाये बिना खर्च बढ़ाना आव्यवहारिक होगा। अम्बिकापुर में मेरे लड़के रहते हैं। इसलिये अतिरिक्त व्यय नहीं होगा। वैसे विश्रामपुर रेलवे स्टेशन का विस्तार करके अगले चार माह में अम्बिकापुर तक रेल चलनी शुरू हो जावेगी।

(6) श्री एस. पी. गहलोत, 155/4 सी, सी शताब्दिनगर, मेरठ यू.पी. 250103,

विचार –अम्बिकापुर सम्मेलन अद्भुत स्थितियों में सम्पन्न हुआ। व्यवस्था बहुत प्रशंसनीय थी। आपका मंच संचालन भी प्रशंसनीय था मुरारीलाल जी की स्वरचित कविताएँ भी बहुत सारगर्भित थी।

किन्तु मैंने अनुभव किया कि आपके कुछ अन्य सहयोगी भी आपकी तानाशाही प्रवृति के परिणाम स्वरूप घुटन में तीन दिन बिताकर वापस गये ऐसी विचित्र स्थिति मैंने आज तक किसी भी सम्मेलन में नही देखी। मैंने दो तीन बार आपके साथियों की आहत भावनाओं का संकेत किया किन्तु आप पूरी तरह अपनी स्व रचित व्यवस्था से अड़िग रहे। सम्मेलन की रिपोर्ट और विस्तृत छपनी चाहिये थी।

उत्तर – आपने जो कुछ भी लिखा वह कटु सत्य है। मैं भी अपने जीवन काल में अनेक सम्मेलनों में शामिल हुआ किन्तु अम्बिकापुर सम्मेलन कुछ लीक से हटकर था (1) प्रायः सम्मेलन औपचारिक होते हैं सम्मेलनों में स्वागत गीत आराम चाय नास्ता में तीन चौथाई समय खर्च होता है इस सम्मेलन में स्वागत में पांच मिनट और फिर लगातार बारह घंटे चर्चा चलती रही। नास्ता चाय के लिये भी सम्मेलन नहीं रूका। (2) सम्मेलन में निष्कर्ष नहीं निकलते। सिर्फ योजनाएँ बनती है। हमारा सम्मेलन निष्कर्ष निकालने के लिये रखा गया था।

मेरा अपना मानना रहा है कि ऐसे सम्मेलन में वे वक्ता बहुत परेशान करते हैं जो बोलने के लिये बोलते हैं। ऐसे लोगों के लिये तीन घंटे का एक खुला सत्र रखकर उन्हें थोड़ा थोड़ा बोलने का अवसर दे दिया जाता है। अन्य सारी चर्चा बन्द कमरे में होती है हमारा सब कुछ खुला था। सीधा सीधा प्रश्नोत्तर तथा संवाद था जो लोग कुछ गंभीर बात रख सकते हैं वे न बोल सके यह ठीक नहीं मैं स्वभाव समय बहुत पाबन्द रहता हूँ। मैं व्यवस्था का अक्षरशः पालन करता हूँ और अपेक्षा करता हूँ कि और लोग भी करें आम तौर पर व्यवस्था को तोड़ने वालों पर सम्मेलनों में कोई अंकुश नहीं होता किन्तु यहाँ था हम व्यवस्था बनाते समय चाहे जो व्यवस्था बना लें किन्तु बनने के बाद तो मानना आवश्यक ही है यदि हमारे साथी ही व्यवस्था तोड़ेंगे तो नये लोग कितना व्यवस्था से चलेंगे। इसलिये मैं तानाशाही निर्देशों के लिए विवश था मैं जानता हूँ कि तानाशाही शब्द गाली के समान है किन्तु मैं गाली सुनने के लिये भी तैयार रहा। मेरा अपना मानना है कि व्यवस्था बनाते समय अधिकतम लोकतंत्र तथा पालन कराते समय पूर्णतया तानाशाही का व्यवहार होना चाहिए। आज सम्पूर्ण भारत में फैली अव्यवस्था का मूल कारण यही है कि व्यवस्था बनाते समय तो लोकतंत्र नहीं है किन्तु पालन कराते समय लोकतंत्र है। यदि भारत की वर्तमान सम्पूर्ण अव्यवस्था का कोई प्रमुख कारण है तो वह है कि यहाँ व्यक्ति को सीधा न्याय या सुविधा देने की बात होती है व्यवस्था से नहीं। मैंने अपने साथियों को इस सम्मेलन के माध्यम से सिखाया है कि व्यवस्था का बहुत महत्व है। मेरा उद्देश्य अपने साथियों की भावनाओं को आहत कराना नहीं था मेरे साथी इस बात को समझेंगे। यदि वे व्यवस्था में कोई कोई सुझाव दे तो स्वागत है किन्तु वे यदि व्यवस्था से हटकर कोई सुविधा चाहें तो वह सुविधा देना न देना। व्यवस्थापक का विशेषाधिकार है लेना आपका अधिकार नहीं है। मैं पुनः दोहरा दूँ कि किसी सम्मेलन में बनी

व्यवस्था से अधिक सुविधा की अपेक्षा करना जो अपना अधिकार मानते हैं उन्हें किसी दूसरे के सम्मेलन में जाने से परहेज करना चाहिये क्योंकि ऐसी सुविधा देना आयोजक का विशेषाधिकार है।
मैं अभी अभी वाराणसी गोविन्दाचार्य जी के सम्मेलन में गया था मंच संचालन बेचारे विवश थे। हर पांच मिनट में वक्ता को समय का ध्यान रखने की हिदायत दी जाती थी। एक वक्ता तो बिल्कुल दादागिरी पर आ गये और चार बार रोकने के बाद उन्होंने कहा कि मैं अपनी पूरी बात कहकर ही बैठूंगा अन्यथा नहीं संचालन छोड़ देता या उनको हाथ पकड़कर बैठा देता लोग इतना खर्च करके ऐसी अव्यवस्था के लिये नहीं आते हैं। अत हमें सम्मेलनों में व्यवस्था बनाये रखने की स्वस्थ परंपरा डालनी ही होगी और तभी देश में व्यवस्था बननी शुरू हो सकती है।

(7) श्री मदनमोहन जी व्यास, अजन्ता रोड रतलाम मध्यप्रदेश,

प्रश्न–

इन्दौर के दैनिक स्वदेश में पढ़ा कि आप गोविंदाचार्य जी के वाराणसी के भारत विकास संगम में गये थे। वहाँ एक समिति बनी है जिसमें आप के साथ–साथ श्री रामबहादुर ही राय, श्री शरद कुमार जी साधक श्री रणसिंह आर्य श्री गोविन्द कुटी मेनन तथा श्री जे. के. बजाज जी शामिल है। इस समिति में शामिल बजाज जी को छोड़कर मैं सबसे परिचित हूँ। मुझे नहीं लगता कि ये व्यवस्था परिवर्तन की सोच रखते हैं आप इस संस्थान का विवरण और बजाज जी का पता भेजने का कष्ट करें। आपका सम्मेलन का क्या अनुभव रहा।
उत्तर – मैं गोविन्दाचार्य जी के सम्मेलन में तीन दिन रहा। सम्मेलन में दो प्रकार के लोग थे 1. समाज निर्माण 2. व्यवस्था परिवर्तन। गोविन्दाचार्य जी स्वयं समाज निर्माण के पक्षधर थे किन्तु मस्तिष्क खुला था। वक्ताओं में नब्बे प्रतिशत समाज निर्माण के पक्षधर थे किन्तु सबके मत भिन्न भिन्न थे। कोई गो संवर्धन पर काम करना चाहता था तो कोई नैतिक और व्यवसायिक शिक्षा पर। कई प्रमुख लोग भी अकार्बनिक कृषि कि लिये लम्बे लम्बे विचार रख रहे थे सबका ध्यान आदर्श समाज रचना तक केन्द्रित था जबकि राम बहादुर जी राय द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव पूरी तरह व्यवस्था परिवर्तन पर केन्द्रित था। मुझे अपनी बात रखने के लिये सर्वाधिक समय करीब पचीस मिनट दिया गया। मैंने व्यवस्था परिवर्तन की आवश्यकता और कार्यप्रणाली पर विस्तृत प्रकाश डाला। मेरा भाषण के बाद वातावरण बदल गया और कई लोगों ने इस मत का समर्थन किया। अन्त में प्रस्ताव सर्व सम्मति से पारित हुआ जो इस प्रकार है।

11/1/85 ट प्रश्न भारत विकास संगम
वाराणसी 20–22 नवम्बर 2004
दिशा–सूत्र

स्वतन्त्रता के पांच से अधिक दशकों में भारत का स्वातन्त्र भारत के लोगों को साथ लेकर चलने और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य में उन्हें सहभागी बनाने में असमर्थ रहा है। देशवासी अब भी अपने आपको राष्ट्र की सत्ता सम्पन्न मुख्य धारा से बाहर ही पाते हैं।
सामान्य लोगों ने अनेक बार समय समय पर होने वाले चुनावों के माध्यम से राजनैतिक सत्ता में परिर्वतन लाकर इस वस्तुस्थिति को बदलने का प्रयास किया है। परन्तु वे अपने इस प्रयास में सफल नहीं हो पाये। राजनैतिक सत्ता के बदलने पर भी सत्ता के स्वरूप एवं उसकी दिशा में कोई परिवर्तन नहीं हो पाया। सम्पूर्ण क्रान्ति एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद जैसी क्रान्तिकारी अवधारणाओं के साथ ही चलते रहें उन व्यवस्थाओं में किसी प्रकार का मौलिक अथवा सतह परिवर्तन नहीं कर पाये।
भारत की आज की समस्त स्थापित व्यवस्थाएँ औपनिवेशिक काल में बढ़ गयी थी यहां के सार्वजनिक जीवन में यहॉ के अपने लोगों की भागीदारी को परिसीमित करना भारत के लोगों और उनकी परम्पराओं उनकी क्षमताओं एवं उनकी इच्छा अनिच्छा को भारत के सार्वजनिक जीवन से बहिष्कृत करने के प्रबन्ध करना ही इन व्यवस्थाओं के निर्माण का प्रमुख ध्येय था राजनीतिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति के पश्चात् भी ये व्यवस्थाएँ अपने उसी मूल उद्देश्य को कार्यान्वित करने में ही लगी है। इसका परिणाम यह हुआ है कि साधारण नागरिक को अब तक पूर्ण अधिकार सम्पन्न नहीं बनाया जा सका है। संसदीय लोकतंत्र ने उसे मात्र मतदाता बना दिया है।

सशक्त–समर्थ भारतीय राष्ट्र का निर्माण सार्वजनिक जीवन के समस्त क्षेत्र में सब लोगों की भागीदारी के बिना सम्भव नहीं है। सब लोग अपने अपने गाँव और जनपदों के स्तर पर समस्त प्रशासनिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्थाएँ अपने स्थानीय साधनों अपनी क्षमताओं एवं अपनी परम्पराओं के अनुरूप चलाने के लिए स्वतन्त्र होंगे तभी भारत एक सशक्त समर्थ राष्ट्र के रूप में उभर पायेगा। इसका आशय यह है कि हम सत्ता का मौजूद पिरामिड़

पलट दिया जाय और सत्ता जो आज केन्द्र से रिसती हुई है गांव तक पहुँचती है। वह गांव से शुरू हो और क्रमशः जिला प्रदेश और केन्द्र में पहुंचे। इसके लिए संविधान की मौजूद व्यवस्था बदलनी होगी। सत्ता के वास्तविक केन्द्र में ही होंगे।

ऐसा लगता है कि मात्र राजनैतिक सत्ता में परिवर्तन के माध्यम से स्थापित व्यवस्थाओं में परिवर्तन असंभव है। अतः स्थापित व्यवस्थाओं में परिवर्तन करने के लिए अब हमें लोकतांत्रिक संघर्ष के मार्ग पर निकलना पड़ेगा।

ग्राम एवं जनपद की समस्त व्यवस्थाओं का इस प्रकार वहां के स्थानीय लोगों द्वारा अपने स्थानीय साधनों से निष्पादित करना और उन स्थानीय जनपादिक स्तर की व्यवस्थाओं के आधार पर प्रान्तीय क्षेत्रीय एवं राष्ट्र व्यवस्थाओं का सृजन एवं भरण करना यही भारत का सनातन मार्ग रहा है। ऐसी ही वरूवस्थाओं की पुनर्स्थापना का प्रयास भारत के सन्त आचार्य एवं महापुरूष अनादिकाल से करते आये हैं। संविधान में उचित संशोधन से व्यवस्था परिर्वतन की बाधाएँ दूर होगीं हम यहाँ उन संशोधनों का संकेत कर सकते हैं। लेकिन बेहतर होगा कि इस पर व्यापक चर्चा हो इसलिए हम खुली चर्चा के हित में उन संकेतों से परहेज कर रहे हैं।

हमारा प्रयास है कि देश का साधारण जन आत्मबल और विश्वास से इतना भरपूर हो जाये कि वह व्यवस्था परिवर्तन के आन्दोलन को अपने बल पर मंजिल तक पहुँचा दें इसकी शुरूआत करने के लिये ही यह सम्मेलन बुलाया गया है। समाज में स्वत्वबोध स्वावलम्बन एवं स्वाभिमान जागृत कर उसे अपनी युगानुकूल व्यवस्थाओं की ओर मोड़ने का संकल्प लेने के लिये हम एकत्र हुए हैं। समाज में आज प्रचलित एवं प्रतिष्ठित अनेकाविधि प्रयासों के मध्य संवाद सहयोग एवं समन्वय बढ़ाते हुए और सब को साथ लेकर सद्शक्ति का संगठन करते हुए हम इस संकल्प को सम्पन्न करेंगे। सांस्कृतिक पुनर्जागरण एवं व्यवस्था परिवर्तन के इस महान् लक्ष्य के लिए एक सशक्त अभियान के प्रति हम संकल्पबद्ध है। यह अभियान राष्ट्रीय स्वाभिमान और गतिमान स्वतन्त्रता के जागरण संघर्ष का ही नवीन संस्करण है। इसे हम समग्र आमनीय कहना चाहेंगे।

प्रस्ताव पारित होने के बाद गोविन्दचार्य जी ने एक सलाहकार समिति का गठन किया जिसमें मैं भी शामिल हूँ। यह समिति कोई कार्यकारिणी नहीं है बल्कि सलाहकार समिति है। बजाज जी को मैं नहीं जानता न ही उनका पता मालूम है। गोविन्दाचार्य जी संस्कारों से निर्माण कार्य के पक्षधर है किन्तु ईमानदारी से मार्ग की खोज में भी लगे हैं। साधक जी दोनों दिशाओं में सक्रिय है। रनसिंह जी व्यवस्था परिवर्तन से कोसों दूर है। राय जी पूरी तरह व्यवस्था परिवर्तन के पक्षधर है मेनन जी दोनों और सोच रखते है मैं समझता हूँ कि मेरा वहां जाना और सलाहकार का दायित्व स्वीकार करना पूरी तरह उचित है।

(8) श्री रामनरेश सिंह बलिया उत्तर प्रदेश,

प्रश्न – अम्बिकापुर सम्मेलन में आपने अपने कुछ साथियों को नाराज किया। जब प्रारंभ में ही यह हाल है तो भविष्य में क्या होगा?

उत्तर – हम संगठन के लिये कोई संगठन नहीं बना रहें बल्कि हम एक ऐसा मंच बना रहे हैं। जो वर्तमान व्यवस्था को बदलने के पक्षधर है। अभी तीन तरह के लोग हैं–

(1) जो वर्तमान व्यवस्था को इस तरह चलते हुए देखना चाहते हैं क्योंकि इसमें उनके लाभ निहित है।

(2) जो वर्तमान व्यवस्था को दोषी न मानकर समाज को दोषी मानते हैं और चरित्र निर्माण तथा व्यवस्था सुधार में लगे हैं।

(3) जो व्यवस्था में सुधार असंभव मानकर व्यवस्था परिवर्तन चाहते हैं।

मैं तीसरे समूह का हूँ। मैं चाहता हूँ कि सम्पूर्ण देश में दो विचारधाराओं के बीच ध्रुवीकरण हो जिनमें एक विचार धारा तीसरे पक्ष वालों की हो। मेरी कार्यप्रणाली ऐसी है कि व्यवस्था परिवर्तन के समर्थकों के बीच समन्वय हो टकराव नहीं। हमारी भूमिका मंच के समान हो हमारे अधिकांश साथी इसी मत के हैं। किन्तु कुछ साथी विचार कि अपेक्षा लोक स्वराज्य मंच की भूमिका सहयोग सामंजस्य की होनी चाहिए हमारे कुछ साथी सर्वोदय का इतना अधिक महत्व नहीं देना चाहते थे मैंने उन्हें साफ शब्दों में संदेश देना चाहा है कि सर्वोदय जहाँ तक हमारे कार्य में लगता है। वहाँ तक हमें पूरा समर्थन करना चाहिए हम न कोई दल बना रहें है। न कोई संगठन। मैंने अपने साथियों को स्पष्ट संदेश दिया है कि हम अन्य दलों तथा संगठनों में इस विचार के आधार पर विचार मंथन शुरू करावें। यदि हम स्वयं ही अपने संगठन या मंच के प्रति अधिक संवेदन शील हो जायें तो संगठन भले ही मजबूत हो किन्तु विचार प्रसार में बाधा होगी। मेरे विचार का आम तौर पर साथियों ने समर्थन किया। मैं अपने इस विचार पर दृढ़ था कि हमारा उद्देश्य नया संगठन बनाना नही है। यदि व्यवस्था परिवर्तन के लिये कोई अन्य संगठन मजबूती से खड़ा हो तो हम मजबूती से खड़े हों और यदि ऐसे में न चाहते हुए भी कोई संगठन बन जावे तो हमें कोई आपत्ति नहीं होगी मुझे खुशी है कि सर्वोदय में भी इस मुद्दे पर गंभीर योजना बन रही है गोविन्दाचार्य जी भी इस मुद्दे पर गंभीर विचार कर रहें है तथा आर्य समाज भी सक्रिय हो रहा है।

(9) श्री एल. मोहन नौरियाल, पोंडी गढ़वाल, उत्तरांचल

प्रश्न – मैं कुछ पारिवारिक कारण से अम्बिकापुर न आ सका, किन्तु ज्ञानतत्व के माध्यम से निष्कर्षों की जानकारी मिली। आपने जिन ग्यारह समस्याओं के समाधान हेतु कमर कसी है। उस पर आज की राजनीति चर्चा तक करने से कतराती है। वर्तमान सम्पूर्ण राजनैतिक व्यवस्था वोट पर आधारित है जबकि पचपन वर्षों के बाद भी वोटर को न संविधान का पता है न ही उसकी कार्यप्रणाली का। राजनीति पर या तो पेशेवर नेताओं का वर्चस्व है। या लुच्चे लफंगे अपराधियों का। समाज सेवा में भी ऐसे ही लोगों का वर्चस्व बढ़ रहा है। ऐसी स्थिति में मेरा सुझाव है कि देश की सरकार चलाने का दायित्व कुछ समाज के लिये समर्पित तथा विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों को सौंप दिया जावे तो राजनेताओं से मुक्ति मिल सकती है।

उत्तर– आपने वर्तमान राजनैतिक वातावरण तथा आज की स्थिति का तो ठीक–ठीक विश्लेषण किया है किन्तु आपका सुझाव पूरी तरह अव्यावहारिक और घिसा पिटा है। आपकी यह बात भी मानने योग्य है कि शासन व्यवस्था कुछ समाज के लिये समर्पित लोगों का चयन कौन और किस पद्धति से करेगा। क्या चयन करने वाली टीम में ऐसे अवांछितों को जाने से रोकना संभव है। क्या वर्तमान अवांछित लोग ही समाजसेवी का प्रमाणपत्र प्राप्त नहीं कर लेंगे? एक हास्यास्पद कहानी है कि भीड़ से घबराकर चयनकर्ता ने आदेश दिया कि इस पद पर सिर्फ वही व्यक्ति नियुक्त हो सकता है जो प्रमाणित करे कि उसके माता और पिता की मृत्यु हो चुकी है दूसरे दिन चयनकर्ता ने पुनः उतनी ही भीड़ देखी और सबके पास यह प्रमाणपत्र मौजूद था कि उसके माता–पिता की मृत्यु हो चुकी है। अतः आप इस विषय पर और विचार करें।

आपने विषय विशेषज्ञ की आवश्यकता बताई विषयों के विशेषज्ञ घपला नहीं करेंगे या अपराध नहीं करेंगे ऐसा कोई रेकार्ड नहीं है। सम्पूर्ण कार्यपालिका में तो विषयों के विशेषज्ञ ही सचिव के रूप में बैठते हैं। फिर ऐसा क्यों होता है। अतः इस व्यवस्था का टुकड़ों में सुधार का कोई मार्ग नहीं दिखता इस संबंध में एक विस्तृत लेख अंक छयासी में जायेगा।